13 गणित के अध्यापन में संवादः वास्तविकताएँ और चुनौतियाँ

एकता शर्मा

समस्या को समझना

डेविड व्हीलर ने कहा था, ''**ढेर सारा गणित जानने की अपेक्षा यह जानना अधिक उपयोगी है कि गणितीकरण किस प्रकार किया जाता है।**'' शायद यह संक्षिप्त कथन गणित की सिखाने–सीखने की सारी समस्या को सारगर्भित रूप से बयान कर देता है। बहुत सारा गणित जानने का मतलब है कि एक पहले से निर्धारित विधि सीखकर उसके अनुसार विभिन्न प्रकार की संगणनाएँ करने में समर्थ होना। दूसरी ओर, गणितीकरण में परिस्थिति की जरूरत के अनुसार गणित को प्रयोग में लाने की योग्यता शामिल होती है – यानी गणितीय रूप से सोचने की क्षमता। गणित के विवरणात्मक प्रश्नों में इस प्रकार का गणितीकरण करने का अवसर मिल सकता है। आइए हम इस मुद्दे की तहों को खोलने का प्रयास करें, और यह देखें कि गणित में परस्पर क्रियात्मक व्यवहार और संवाद के लिए कितना अवसर है, तथा इस अवसर का किस हद तक सिखाने–सीखने में उपयोग किया जाता है।

इबारती सवाल – ''सीमा कुछ रुपये लेकर बाज़ार गई। उसने फल खरीदने में 150 रुपये खर्च कर दिए। अब उसके पास 100 रुपये बचे। बताओ कि वह कितने रुपये लेकर बाज़ार गई थी?''

अक्सर जब इस प्रकार के इबारती सवाल बच्चों को दिए जाते हैं तो वे भ्रमित हो जाते हैं कि उसे हल करने के लिए किस गणितीय क्रिया का इस्तेमाल करना चाहिए। अतः यदि हम यह समझें कि कौन–सी चीजें बच्चों को भ्रमित कर सकती हैं, तो हम उन चुनौतियों को स्पष्ट देख सकेंगे जिनका बच्चों को विवरणात्मक प्रश्न हल करने में सामना करना पड़ सकता है।

> *''इस बात को पहचाने जाने की ज़रूरत है कि गणित स्वयं अपने आप में एक भाषा है जिसके अपने खास संकेतसमूह होते हैं, और किसी भी अन्य भाषा की तरह उसे, सिर्फ उसके संकेतों का कूटानुवाद करने के बजाय, अर्थपूर्ण बनाया जाना चाहिए।''*

कभी–कभी हम देखते हैं कि बच्चे कुछ वाक्यांशों, जैसे ''सब मिलाकर कितने/कितना'' या ''कितना/कितने बचे'' को यह तय करने के लिए इशारों की तरह समझते हैं कि उन्हें किस विधि का इस्तेमाल करना पड़ेगा – जैसे योग, घटाना आदि। अब जैसे ऊपर दिए गए प्रश्न में साफ तौर पर ऐसे शब्दों का इस्तेमाल किया गया है जो बच्चों को घटाने की ओर ले जा सकते हैं।

शब्दों के चुनाव के अलावा, ऐसे प्रश्न का सन्दर्भ और पृष्ठभूमि भी बच्चों के लिए अगली बड़ी चुनौती होती है। कभी–कभी जब सन्दर्भ बच्चे के लिए अप्रासंगिक होता है तो इसके कारण विवरणात्मक प्रश्न को हल करने का सारा मजा चला जाता है, और वह सारे अभ्यास को मशीनी बना देता है।

यहाँ एक दूसरा उदाहरण हैः ''कक्षा 3 की गणित की पाठ्यपुस्तक में 86 पेज हैं और कक्षा 3 की हिन्दी की पाठ्यपुस्तक में 75 पृष्ठ हैं। दोनों पाठ्यपुस्तकों को मिला कर कुल कितने पृष्ठ हुए?''

कोई भी समझदार या विवेकशील व्यक्ति क्यों यह जानना चाहेगा कि दोनों पाठ्यपुस्तकों को मिला कर उनमें कुल कितने पृष्ठ हुए। इसके बजाय यदि प्रश्न को अधिक वास्तविक सन्दर्भ दिया जाए तो यह बच्चों का ध्यान आकर्षित कर सकता है, और फिर वे उसे अर्थपूर्ण मानकर हल करने की कोशिश करेंगे। यहाँ एक दूसरा उदाहरण है – ''दीपा को अपने प्रतिदिन के खर्चों को दर्ज करने की आदत है। आज उसने फलों पर 86 रुपये और सब्जियों पर 75 रुपये खर्च किए। आप यह गणना करने में उसकी मदद करें कि आज दीपा ने कितना पैसा खर्च किया''?

ऊपर दिए गए उदाहरण के 'भाषायी' विवरण को बहुत थोड़ा–सा बढ़ा देने पर प्रश्न की परिस्थिति की पूरी तस्वीर रूपान्तरित होकर अधिक सार्थक अभ्यास में बदल जाती है। जीवन से जुड़े स्पष्ट शब्दों में व्यक्त, इस तरह के भाषायी विवरण वाले सवालों से, गणित को प्राथमिक स्तर पर जिस तरह देखा जाता है, सिखाया जाता है और सीखा जाता है, उसे काफी हद तक बदला जा सकेगा।

शाब्दिक सवालों को हल करते समय, शिक्षा का भाषायी माध्यम और जिस सन्दर्भ में सवाल को जमाया गया है, शायद ऐसी प्राथमिक चुनौतियाँ हैं जिनका बच्चे सामना करते हैं। हालाँकि अन्य मुद्दे भी हैं। वे बच्चे जो भाषा से काफी अच्छे से परिचित होते हैं, कई बार उन्हें भी इस तरह के प्रश्नों को हल करने में संघर्ष करना पड़ता है। यह स्पष्ट बताता है कि गणित की 'समस्या' की जड़ें शिक्षा के माध्यम की कठिनाई से कहीं ज्यादा गहरी हैं।

आइए इस मुद्दे को स्पष्ट करने के लिए हम सरल विधियों पर आधारित सवालों के कुछ उदाहरण लें।

```
  24
+32          24+32 =.....24 और 32 जोड़ने पर होता है
------
------
```

(पहला उदाहरण) (दूसरा उदाहरण) (तीसरा उदाहरण)

जहाँ पहले दो सवाल शुद्ध गणितीय संकेतों में दर्शाए गए हैं, वहीं तीसरा प्रश्न पहले और दूसरे, दोनों सवालों की शाब्दिक अभिव्यक्ति है।

उदाहरण 1 उस सबसे ज्यादा प्रचलित स्वरूप को दर्शाता है जिसमें जोड़ के सवाल देश भर में छात्रों के सामने लाए जाते हैं। उदाहरण 2 में जिसमें एक नए संकेत, अर्थात ''बराबर'' है, को शामिल करने से स्वरूप में थोड़ा परिवर्तन हुआ है, लेकिन जबानी पढ़ने पर वह (उदाहरण 1 की तुलना में) इस प्रश्न को गणितीय शब्दावली में ज्यादा सटीक ढंग से बताता है– ''चौबीस धन बत्तीस बराबर....''। ऐसा देखा गया है कि जो बच्चे उदाहरण 1 में दिए गए जोड़ के स्वरूप से तो खासे परिचित होते हैं, लेकिन जिन्हें उदाहरण 2 का बहुत कम ज्ञान होता है या बिल्कुल नहीं होता, वे या तो यह समझ ही नहीं पाते कि उदाहरण 2 को किस तरह से हल करें, या वे जोड़ने की प्रक्रिया में घालमेल कर देते हैं, जैसे इकाई अंक को दहाई के अंक में जोड़ देना आदि।

यह दर्शाता है कि समस्या पूरी तरह से उस भाषायी माध्यम की नहीं है जिसमें प्रश्न पूछा जाता है। सवालों को शुद्ध गणितीय ढंग से व्यक्त करने के मामले में भी, यदि उनके स्वरूप को थोड़ा–सा ही बदलकर पेश किया जाए, तो बच्चों को समझने में कठिनाई होती है।

उदाहरण 3 एक अलग प्रकार की स्थिति है। यहाँ इस्तेमाल की गई भाषा वह भाषा नहीं है जिसका हम अपने रोजमर्रा के जीवन में आमतौर पर उपयोग करते हैं। इसमें भी, उदाहरण 1 और उदाहरण 2 की ही तरह, कुछ अमूर्तिकरण शामिल रहता है, लेकिन इसके साथ ही यह इस प्रश्न को हल करने में इस्तेमाल की जाने वाली क्रिया विधि को भी साफ–साफ बताता है। इसमें गणितीय शब्दावली का इस्तेमाल करके लिखी जाने वाली कोई गणितीय उक्ति शामिल रहती है, उदाहरण के लिए ''जोड़ने पर होता है'', या कभी–कभी ''2 और 2 मिल कर 4 होते हैं''। इस तरह की शब्दावली उस भाषा का अंग नहीं बनती जिसे माध्यम के रूप में इस्तेमाल किया जाता है, जो इस मामले में हिन्दी है। ये गणितीय शब्दावली होती है, और कई बार हम इस महत्वपूर्ण तथ्य को नजरअन्दाज कर देते हैं। ये शब्द गणितीय भाषा की एक प्रकार की शाब्दिक अभिव्यक्ति होते हैं। यदि बच्चों को इन पदों और मुहावरों के बारे में यह नहीं समझाया जाता कि ये गणितीय रूप से बातचीत करने के तरीके का हिस्सा हैं, तो जिन प्रश्नों में इन्हें इस्तेमाल करना शामिल रहता है वे बच्चों के लिए अधिक भ्रमित करने वाले होते हैं।

इस बात को पहचाने जाने की जरूरत है कि गणित स्वयं अपने आप में एक भाषा है जिसके अपने खास संकेत समूह होते हैं। किसी भी अन्य भाषा की तरह गणित को, सिर्फ उसके संकेतों का कूटानुवाद करने के बजाय, अर्थपूर्ण बनाया जाना चाहिए। केवल संकेतों और विधियों को जानने से भी संगणना में निश्चित रूप से मदद मिलेगी। लेकिन यह बच्चों को गणितीय रूप से सोचने में तब तक मदद नहीं करेगा जब तक कि उन्हें इनका मतलब समझने के अवसर प्रदान नहीं किए जाते।

मुख्य मुद्दे

बच्चों को इबारती सवालों को हल करना इतना कठिन क्यों लगता है? एनसीएफ 2005, शिक्षण में अर्थ के केन्द्रीय महत्व का बहुत जोर देकर उल्लेख करता है। वह बहुत साफ शब्दों में यह तर्क देता है कि ऐसी शिक्षा, जिसकी प्रकृति अपेक्षाकृत स्थायी प्रकार की होती है, की एक जरूरी पूर्वशर्त होती हैः उसे अर्थपूर्ण बनाना।

यह कह चुकने के बाद, आइए हम इसका परीक्षण करें कि गणित का बच्चों से जिस तरीके से परिचय कराया जाता है और उन्हें पढ़ाया जाता है, वह इस शर्त को पूरी करता है या नहीं। सरकारी प्राथमिक स्कूलों में उपयोग की जानी वाली पाठ्यपुस्तकों से कुछ उदाहरण लेने पर हमने देखा कि उनमें:

1. गणित सीखने से पूर्व–अवस्था की अवधारणाओं, जैसे बड़ा–छोटा, नियमित संरचनाओं को पहचानना, समानताओं और अनुरूपताओं को पहचानना आदि, को पर्याप्त स्थान नहीं मिलता।
2. जहाँ उन्हें स्थान मिलता भी है, तो संख्याओं को समझने में उनका ठीक से इस्तेमाल नहीं होता।
3. संख्याओं और उनके समतुल्य शब्दों, उदाहरण के लिए '3' और 'तीन', दोनों का एक साथ परिचय करवाया जाता है। जबकि बच्चे न तो अंकों से ठीक से परिचित हुए होते हैं और न भाषा से।
4. रोजमर्रा के जीवन के साथ सम्बन्ध बहुत मजबूत और उपयुक्त नहीं होते।
5. पाठ्यपुस्तकों में अभ्यास के लिए अवसर बहुत हद तक घट गया है क्योंकि अवधारणा के परिचय के लिए अधिक स्थान

दिया गया है। एक ओर जहाँ यह अच्छी बात है कि इस तरह अवधारणात्मक समझ पर ध्यान केंद्रित करने की कोशिश की गई है, वहीं दूसरी ओर अभ्यास की वैकल्पिक सामग्री, जैसे कार्य पुस्तिका आदि, की कमी की वजह से यह बच्चों के सीखने पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। यहाँ पर मैं यह सलाह दूँगी कि गणित को सीखने में अभ्यास का भी स्थान है। अवधारणात्मक समझ के साथ प्रश्नों को हल करने का अभ्यास, गणित जैसे विषय को सीखने के लिए वाकई बहुत जरूरी होता है, क्योंकि गणित सीखने का पूरा प्रयोजन ही सोचने और तर्क करने का एक खास तरीका विकसित करना है। इसके लिए निश्चित तौर पर अभ्यास की जरूरत होती है।

इस वास्तविकता को देखते हुए कि पाठ्यपुस्तकें लगभग पूरी तरह से पढ़ाने – सीखने की प्रक्रिया का मार्गदर्शन करती हैं, यह कहना तर्कसंगत होगा कि गणित के अध्यापन में भी उपरोक्त बिन्दुओं का प्रभाव दिखाई देता है।

इसके अतिरिक्त, इस तथ्य पर गौर करें कि गणित की अभिकलन विधियों (अल्गोरिद्म) पर आधारित प्रश्नों (जैसे कि उदाहरण 1–पीछे के पृष्ठ पर दर्शाए गए), में बच्चों का प्रदर्शन विवरणात्मक प्रश्नों की तुलना में, प्रश्न के थोड़े बदले स्वरूप (उदाहरण 2) में उनके प्रदर्शन से बेहतर होता है। यह देखना आसान है कि इस परेशानी की जड़ें एक विषय के रूप में गणित की प्रकृति की समझ के अभाव में स्थित हैं। इसमें जो मुख्य मुद्दा प्रतीत होता है वह सही उत्तर पर पहुँचने के लिए एक नियत प्रक्रिया का अनुसरण करने पर अनावश्यक, बल्कि अनुचित जोर दिया जाना। इस बात पर जोर नहीं दिया जाता कि, चाहे प्रश्न सरल अभिकलन गणित पर ही क्यों न आधारित हो, बच्चे उस प्रश्न के साथ उलझें। प्रश्न को हल करने के अलग–अलग तरीकों को पहचानें तथा इस्तेमाल की गई विधि और उसके पीछे के कारणों/तर्कों को शाब्दिक रूप में बताएँ।

आगे की राह

सीधे कहें तो, जैसे किसी भाषा को सीखने के लिए उसे उपयुक्त सन्दर्भ दिया जाना जरूरी होता है उसी प्रकार जब प्राथमिक स्तर पर गणित से परिचय कराया जाता है तो उसे भी परिचित सन्दर्भ में रखना जरूरी है। सीखने– सिखाने की प्रक्रिया इस तरह से रची जाना चाहिए कि वह वास्तविक जीवन से जुड़ी परिस्थितियों वाले प्रश्न प्रस्तुत करे। बच्चों को सिर्फ सही उत्तर पर पहुँचने के लिए कहने के बजाय, कई सम्भव हल ढूँढने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। ऐसा करने के लिए, विवरणात्मक प्रश्नों को इस प्रकार से दिया जाना चाहिए कि उनमें शिक्षक और छात्रों के बीच संवाद के लिए गुंजाइश रहे। उदाहरण के लिए बच्चों से सीधा–सीधा जोड़ करने के लिए कहने के बजाय, उनसे दी गई संख्याओं को जोड़ने के तीन अलग–अलग तरीके ढूँढने के लिए कहें; या ऐसा भी कर सकते हैं कि उत्तर पहले दे दें, और उनसे उन उत्तरों के लिए प्रश्न बनाने को कहें।

बच्चों के लिए गणित को सीखने का और अधिक अर्थपूर्ण अनुभव बनाने के लिए उसमें इस प्रकार के संवाद और पारस्परिक गतिविधियाँ लाने की जरूरत है।

यह एक बड़ी चुनौती है क्योंकि सीखने की स्थितियों में गणित को सीखनेवालों में भेद करने वाले एक औजार की तरह से इस्तेमाल किया जाता है। उसने ज्यादातर विद्यार्थियों में डर और आशंका पैदा की है। यहाँ तक कि युवा विद्यार्थियों को घातक कदम उठाने पर भी मजबूर किया है। शिक्षक भी ऐसा महसूस करते हैं कि कुछ विद्यार्थी गणित द्वारा प्रस्तुत की गई चुनौती का सामना करने में सक्षम नहीं होते। यह भी एक आम मिथक (धारणा) है कि लड़कियाँ गणित में उतनी उत्सुक नहीं होतीं जितने लड़के होते हैं।

ये धारणाएँ बेबुनियाद और निराधार हैं। हम सभी के लिए यह जानना महत्वपूर्ण है कि, **''हर बच्चा गणित सीख सकता है और सभी बच्चों को गणित सीखने की जरूरत होती है।''**

जरूरत है तो इस विषय को इस ढंग से पढ़ाने की जो इसमें विद्यार्थियों की रुचि जगाए। वह ढंग जो उन्हें सिर्फ भ्रमित करने के बजाय इसमें उपयोगी अर्थ निकालने की गुंजाइश दे। यहाँ ब्रूनर द्वारा कही गई बात को याद करना सार्थक होगा, **''किसी भी बच्चे को विकास के किसी भी चरण में कोई भी विषय किसी बौद्धिक रूप से ईमानदार स्वरूप में कारगर ढंग से सिखाया जा सकता है।''** यह बात उन्होंने सीखी जा रही विषयवस्तु की उपादेयता के बारे में कही थी। मुझे विश्वास है कि गणित भी इसका अपवाद नहीं है!

एकता शर्मा *वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन के उत्तराखण्ड दल में अकादमिक और पैडागॉजी समन्वयक के रूप में कार्य कर रही हैं। वे जून 2005 में फाउण्डेशन से जुड़ीं। उन्होंने शिक्षा में स्नातकोत्तर उपाधि ली है। वे इससे पहले दिल्ली विश्वविद्यालय के सेंट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन में काम करती थीं। उनसे* ekta@azimpremjifoundation.org *पर सम्पर्क किया जा सकता है।*